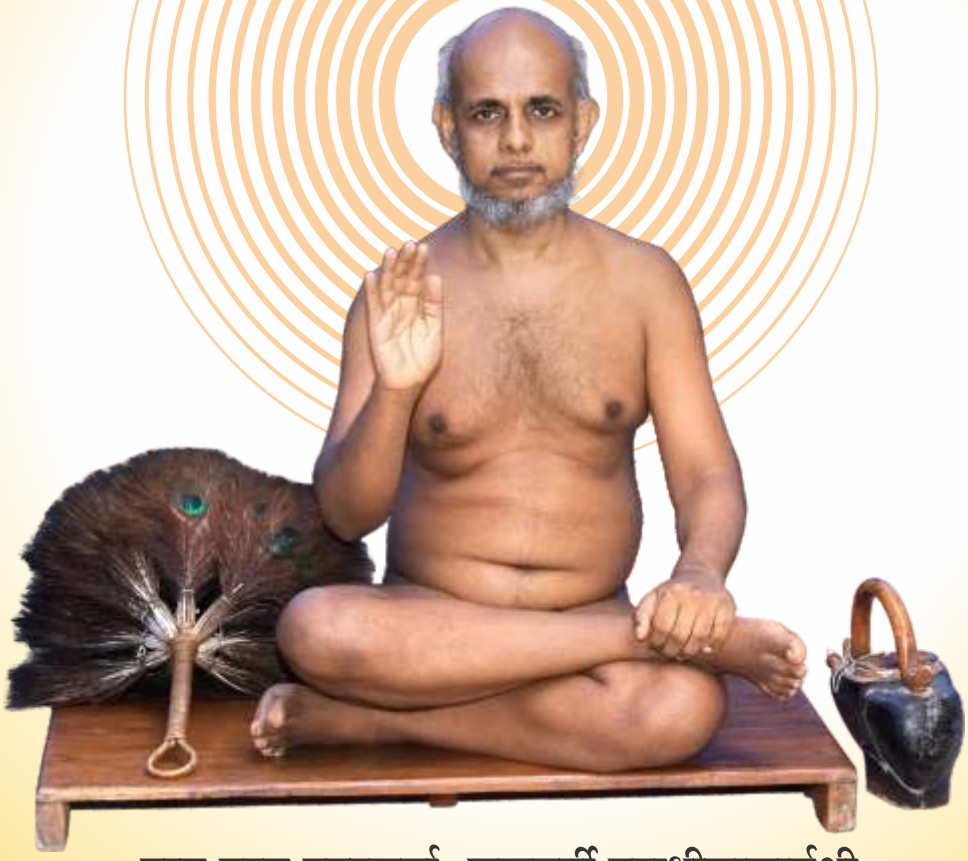

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

श्री विषापहार विधान

रचयित्री :
पूज्या गणिनी-आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी

प्रकाशक
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर-मेरठ (उत्तरप्रदेश)

(परम्परानायक)

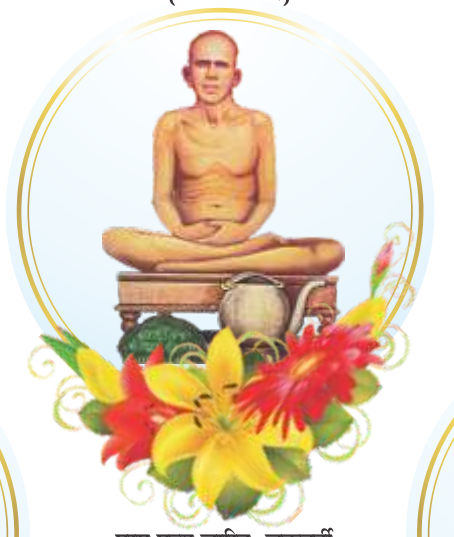

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला का पुष्प नं. 244
ISBN 978-93-80353-82-1

श्री विषापहार विधान

-रचयित्री-

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

भगवान शांतिनाथ जन्म, दीक्षा व निर्वाणकल्याणक दिवस—ज्येष्ठ कृ. चतुर्दशी, 11 जून 2010 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित ''प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर वर्ष'' के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र., फोन नं.- (01233) 280184, 292943
Website : www.jambudweeep.org
E-mail : ravindrajain@jambudweeep.org

COURTESY—JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

द्वितीय संस्करण	वी.नि.सं. 2537, वैशाख शु. 3	मूल्य
2200 प्रतियाँ	6 मई 2011, अक्षय तृतीया	16/-रुपये

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

-: मार्गदर्शन :-
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

-: निर्देशन :-
धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज

-: सम्पादक :-
कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण, सन् 2006-प्रतियाँ 2200

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन

वर्तमान में–कलियुग में आज घर गृहस्थी में अनेक समस्याएं आ जाती हैं जिससे अक्सर लोग माताजी के पास आते हैं और पूज्य माताजी से निवेदन करते हैं माताजी हमारे ऊपर बहुत संकट आया है आप ही इसे दूर कर सकती हैं। माताजी उन्हें यंत्र-मंत्र बता देती हैं और कहती हैं आप इसे श्रद्धापूर्वक करिए आपका संकट अवश्य दूर होगा।

इसके साथ ही माताजी एक बात अक्सर सबसे कहती हैं कि घर गृहस्थी में रहते हुए भी यदि तुम समय-समय पर पूजा विधान करते रहो। प्रतिदिन भगवान का दर्शन करो, जो आचार्यों ने गृहस्थ के लिए छह कर्त्तव्य बताएँ हैं उसे प्रतिदिन करते रहोगे, तो तुम्हारे ऊपर संकट नहीं आएगा और तुम्हारा गृहस्थ धर्म भी सार्थक होगा। छः कर्तव्य कौन से हैं देखिए–

''देवपूजा गुरुपास्ति स्वाध्याय संयमस्तपः।
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने।।''

देवपूजा, गुरुओं की उपासना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान ये श्रावक के छह कर्तव्य हैं। इन्हें अपने जीवन में प्रतिदिन करना चाहिए।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने 250 ग्रंथों की श्रृँखला में एक और ग्रंथ ''श्री विषापहार विधान'' लिखकर प्रदान किया है। यह एक हर्ष की बात है। यह विधान भी एक चमत्कारिक विधान है। जिस विषापहार स्तोत्र की रचना से धनंजय कवि के पुत्र का विष उतर गया हो। उस स्तोत्र पर रचित विधान भी अवश्य ही सभी रोग, शोक, दुःख, दारिद्र्य को दूर करेगा। जो विधिवत् इस विधान को 40 दिन तक करेंगे, उनके नियम से सभी मनोरथ पूर्ण होंगे। रोग-शोक की बाधाएं दूर होंगी। भक्ति में अचिंन्त्य शक्ति बताई है। भक्ति करते-करते भक्त एक दिन भगवान बन जाता है। तो छोटे-छोटे कार्य तो वैसे ही सिद्ध हो जायेंगे। यह नूतन विधान सभी के लिए मंगलकारी हो। संघ के लिए भी मंगलकारी हो, संघ में सभी स्वस्थ रहें एवं जिनधर्म की खूब प्रभावना हो। यह मंगलकामना है और भगवान जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना है कि पूज्य माताजी भी स्वस्थ रहें एवं दीर्घायु प्राप्त करें।

प्रस्तावना

–ब्र. कु. आस्था जैन (संघस्थ)

''विषापहारं मणि मौषधानि, मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च,
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति, पर्यायनामानि तवैव तानि।''

श्री विषापहार स्तोत्र में कविवर श्री धनंजय जी ने बहुत सुन्दर बात कही है कि आज लोग विष को दूर करने के लिए मणि, मंत्र, औषधि आदि को जगह-जगह ढूंढने में लगे हुए हैं जबकि मंत्र, मणि, औषधि सब भगवान के पर्यायवाची नाम हैं। भगवान की भक्ति में वह अचिन्त्यशक्ति है जो विष को भी दूर कर देती है।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जिन्होंने 250 ग्रंथों की रचना कर साहित्य जगत में एक कीर्तिमान स्थापित किया है। उनमें से छोटे-बड़े सभी विधानों की संख्या लगभग 50 है। इन्द्रध्वज महामण्डल विधान, कल्पद्रुम विधान, सर्वतोभद्र विधान, तीन लोक विधान, विश्वशांति महावीर विधान, पंचपरमेष्ठी विधान आदि वृहद् एवं लघु विधानों की श्रृंखला में यह 'विषापहार विधान' की रचना की है।

इस विधान में पूज्य माताजी ने सर्वप्रथम वंदना में भगवान ऋषभदेव को, भूत, भविष्यत्, वर्तमानकालीन अनन्त तीर्थंकरों को, अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य और जिनचैत्यालय इन नव देवताओं को, वृषभसेन से गौतम गणधर तक सभी गणधरों को, सरस्वती माता को, जिनकी कृपा प्रसाद से घर बैठे तीनों लोकों की यात्रा हो जाती है। उन्हें नमन करके अपनी ज्ञानकली को और विकसित करते हुए इस विषापहार स्तोत्र पर, जो कि सभी रोग, शोक, मोहरूपी शत्रु एवं सर्प के विष को दूर करने वाला है और संपूर्ण सुखों को देने वाला है, ऐसे स्तोत्र पर माताजी ने विधान की रचना करके भक्तों के लिए निरोगता–स्वस्थता प्राप्त करने का साधन प्रदान किया है।

इस विधान में पूज्य माताजी ने विषापहार स्तोत्र के 1-1 काव्य पर 1-1 मंत्र का अर्घ्य बनाकर 40 अर्घ्य दिए हैं। इसमें तीन वलय किए हैं। प्रथम वलय में ऋषभदेव भगवान के आठ अर्घ्य दिए हैं। द्वितीय वलय में 16 अर्घ्य हैं और तृतीय वलय में भी 16 अर्घ्य हैं इसमें 3 पूर्णार्घ्य और 1 जयमाला है।

इस विधान को जो भक्त विधिवत् 40 दिन तक लगातार करेंगे उनके नियम से रोग, शोक, दरिद्रता आदि दूर होगी। शरीर पूर्ण स्वस्थ होगा।

यह विधान सभी के लिए मंगलकारी हो, ऐसी भगवान ऋषभदेव से मंगल प्रार्थना है और मेरे भी सभी मनोरथ पूर्ण हों। पूज्य माताजी की छत्रछाया एवं उनका वरदहस्त सदा बना रहे। जब तक मुक्ति की प्राप्ति न हो, तब तक गुरु का सम्बोधन, उनकी देशना प्राप्त होती रहे, यही जिनेन्द्र देव से मंगल प्रार्थना है। पूज्य माताजी के चरणकमलों में कोटिशः नमन।

श्री विषापहार स्तोत्र का महत्त्व

–ब्र. कु. स्वाति जैन (संघस्थ)

द्विसंधान महाकाव्य के प्रणेता महाकवि धनंजय का नाम जन-जन में प्रसिद्ध है। इन्होंने द्विसंधान काव्य के साथ-साथ विषापहार स्तोत्र और धनंजय-नाममाला ये तीन ग्रंथ बनाये हैं। इस विषापहार स्तोत्र में भगवान ऋषभदेव की स्तुति है। यह स्तुति गंभीर, प्रौढ़ और अध्यात्म से पूर्ण अनूठी रचना है। इसमें शब्दों का माधुर्य, अर्थों का गांभीर्य और अलंकार की छटा यत्र-तत्र देखने को मिलती है।

विषापहार स्तोत्र की रचना के पीछे इसका मुख्य हेतु उनके जीवन की अपूर्व घटना का इतिहास है–एक दिन श्री धनंजय कवि मंदिर में भगवान की पूजन भक्ति में लीन थे। उस समय घर पर उनके पुत्र को एक सर्प ने डस लिया। उस सर्प का विष बालक पर चढ़ गया जिससे बालक मूर्च्छित हो गया। माँ यह देखकर घबड़ा गई, उसने तुरंत अपने पति के पास समाचार भेजा, लेकिन वे पूजन को बीच में छोड़कर नहीं आए। तब माँ ने पुत्र को मंदिर ले जाकर पति के सम्मुख डाल दिया। पूजा से निवृत्त हो कवि ने विचार किया कि जिनभक्ति का प्रभाव तो अचिन्त्य होता है तो भला मेरे पुत्र का विष इस भक्ति से क्यों नहीं दूर होगा? तत्काल विषापहार स्तोत्र की रचना करते हुए भक्ति में लीन कविराज कहते हैं– हे प्रभो! इस बालक का विष उतारने के लिए मैं मणि, मंत्र, औषधि की खोज में यत्र-तत्र भटकने वाला नहीं, मुझे तो आप ही कल्पवृक्ष रूप दिखाई देते हैं। सत्य है कि हे भगवन्! लोग विषापहार मणि, औषधियों, मंत्र और रसायन की खोज में भटकते फिरते हैं, वे यह नहीं जानते कि ये सब आपके ही पर्यायवाची नाम हैं। इधर स्तोत्र रचना हो रही थी, उधर पुत्र का विष उतर रहा था। स्तोत्र पूरा होते-होते बालक निर्विष होकर उठ बैठा। चारों ओर जैनधर्म की जय-जयकार गूंज उठी और धर्म की अपूर्व प्रभावना हुई। तब से यह विषापहार स्तोत्र अनेक प्रकार के शारीरिक कष्टों को दूर करने में प्रसिद्ध हुआ है। इस स्तोत्र में 40 छन्द हैं और सभी छन्दों में अपूर्व शक्ति का वास है। यही कारण है कि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इसमें एक-एक पद्य एवं ऋषिमंत्रों का आधार लेकर सुन्दर विधान बनाया है जो सभी के लिए रामबाण औषधि के समान है।

प्रत्येक भव्यात्मा को मन-वचन-काय की शुद्धिपूर्वक प्रतिदिन प्रातः स्तोत्र का पाठ करना चाहिए और विधान करके शारीरिक एवं आत्मिक स्वस्थता प्राप्त करना चाहिए।

विधान की रचयित्री राष्ट्रगौरव, गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**–गोयल, **नाम**–कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952 में बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम–क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं 250 विशिष्ट ग्रंथों की लेखिका। सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा– भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

–पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं–

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है– कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, तीन लोक रचना एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. ज्ञानमती कला मंदिरम् में हस्तिनापुर के प्राचीन इतिहास से संबंधित झाँकियाँ हैं।

12. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य ''नंद्यावर्त महल'' तथा प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का भी संचालन होता है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खारी बावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली

नवदेवता पूजन

–गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

–गीता छन्द –

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर, मूर्ति जिनगृह वंद्य हैं।।
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें।
आह्वान कर थापें यहाँ, मन में अतुल श्रद्धा धरें।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु जिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टक –

गंगानदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा।
अंतर मलों के क्षालने को, नीर से पूजूँ मुदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधी के फेन सम सित, तंदुलों को लायके।
उत्तम अखंडित सौख्य हेतु, पुंज नव सुचढ़ायके।।

नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा चमेली केवड़ा, नाना सुगन्धित ले लिये।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में।
निज आत्म अमृत सौख्य हेतू, पूजहूँ नत भाल मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जगमगे, दीपक लिया निज हाथ में।
तुम आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंधधूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु, दीपक सुधूप फलार्घ्य ले।
वर रत्नत्रय निधि लाभ यह, बस अर्घ्य से पूजत मिले।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिन-चैत्यचैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा – **जलधारा से नित्य मैं, जग की शांति हेत।**
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

नानाविध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय।
मैं पूजूँ नव देवता, पुष्पांजली चढ़ाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

***जाप्य –*ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

सोरठा – **चिच्चिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हों।**
गाऊँ गुणमणिमाल, जयवंते वर्तो सदा।।1।।

(चाल-हे दीनबन्धु श्रीपति.....)

जय जय श्री अरिहंत देवदेव हमारे।
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे।।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ।।2।।

आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं।।
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी।।3।।
जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा।
निज आत्मा की साधना से च्युत न हों कदा।।
ये पंचपरमदेव सदा वंद्य हमारे।
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें।।4।।
जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा।।
जिन की ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे।
भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे।।5।।
जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं।
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं।।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें।
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें।।6।।
नव देवताओं की जो नित आराधना करें।
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें।।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ।
सम्पूर्ण ''ज्ञानमती'' सिद्धि हेतु ही भजूँ।।7।।

दोहा – **नवदेवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम।**
भक्ती का फल मैं चहूँ, निजपद में विश्राम।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं.....।

शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

–गीता छंद –

जो भव्य श्रद्धाभक्ति से, नवदेवता पूजा करें।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें।।
नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते।।9।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

श्री विषापहार विधान

(वंदना)

– शंभु छंद –

स्वात्मा में सुस्थित होकर जो, निज तनु प्रमाण आकार धरें।
फिर भी निज ज्ञान किरण से ही, सब जानें त्रिभुवन व्याप्त करें।।
ऐसे प्रभु ऋषभदेव आदी-ब्रह्मा, युगस्रष्टा माने हैं।
उनके श्रीचरण कमल प्रणमूँ, वे भव भव के दुःख हाने हैं।।1।।

जो भूत भविष्यत् वर्तमान, त्रैकालिक तीर्थंकर माने।
जो हुये अनन्तों, होते हैं, होवेंगे भी मुनिगण जाने।।
जो भावी तीर्थंकर मानें, वे आज यहाँ संसारी हैं।
फिर भी उनका वंदन निश्चित, हम भक्तों को सुखकारी है।।2।।

अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, साधु पंचपरमेष्ठी हैं।
जिनधर्म जिनागम जिनप्रतिमा, जिनमंदिर देते सिद्धी हैं।।
इन नवों देवताओं का नित, जो वंदन पूजन करते हैं।
वे नवनिधि ऋद्धि सिद्धि पाकर, संपूर्ण सुखों को भरते हैं।।3।।

गणधर गुरु वृषभसेन आदिक, से गौतम गणधर तक वंदन।
ये विघ्न विनाशी सर्वसिद्धि, दाता इनके गुण का कीर्तन।।
संपूर्ण अमंगल दूर करे, सब रोग शोक दारिद्र्य हरें।
इनके श्रीचरणों में प्रणमूँ, ये मम रत्नत्रय सिद्ध करें।।4।।

श्री सरस्वती को नमन करूँ, निजज्ञान कली खिल जावेगी।
संपूर्ण लोक की यात्रा भी, यहाँ ही बैठे हो जावेगी।।
श्री विषापहार स्तुति पूजा, संपूर्ण सौख्य भरणी होगी।
सब रोग शोक मोहारि सर्प के, विष की अपहरणी होगी।।5।।

– दोहा –

श्री धनंजय कविरचित, स्तोत्र विषापहार।
उसकी पूजा मैं रचूँ, अल्पबुद्धि सुखकार।।6।।

इस विधान को भक्ति से, करो कराओ भव्य।
पूर्ण स्वस्थता प्राप्त कर, नित सुख पावो नव्य।।7।।

इसके स्वामी ऋषभजिन, आदितीर्थ करतार।
मन वच तन से नित्य मैं, नमूँ अनन्तों बार।।8।।

अथ श्री विषापहारस्तोत्र पूजा प्रतिज्ञापनाय पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अत्र विषापहार पूजा

–स्थापना–

तर्ज –गोम्मटेश जय गोम्मटेश मम हृदय विराजोः...

ऋषभदेव जय ऋषभदेव, मम हृदय विराजो-2
हम यही भावना भाते हैं, प्रतिक्षण ऐसी रुचि बनी रहे।
हो रसना पर ऋषभाय नमः, पूजा में प्रीति घनी रहे।।हम.।।
हे ऋषभदेव आवो आवो, आह्वान आपका करते हैं।
युगस्रष्टा प्रभु की भक्तीकर, नित नित नव मंगल भरते हैं।।
प्रभु ऐसी शक्ती दे दीजे, गुण कीर्तन में मति बनी रहे।।हम.।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिन् आदितीर्थंकर श्री ऋषभदेव! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिन् आदितीर्थंकर श्री ऋषभदेव! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिन् आदितीर्थंकर श्री ऋषभदेव! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टकम्–

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4
जिनवर यशसम उज्ज्वल जल ले, प्रभु चरणों त्रयधार करूँ।
जन्म जरा मृत्यू विनाश हो, इसीलिए प्रभु ध्यान धरूँ।।
भव-भव तृषा मिटाने वाली, पूजा जिन भगवान की।।जिनकी.।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4

जिनवर वच सम शीतल चंदन, केशर संग घिसाया है।
प्रभु के चरण कमल में चर्चत, भव संताप मिटाया है।।
तन मन को शीतल कर देती, अर्चा जिन भगवान की।।जिनकी.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4
जिनवर गुण सम उज्ज्वल अक्षत, लेकर पुंज चढ़ाऊं मैं।
अमल अखंडित सुख से मंडित, निज आतम पद पाऊँ मैं।।
इंद्र सभी मिल करें वंदना, प्रभु के अक्षय ज्ञान की।।जिनकी.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4
जिनवर कीर्ति सदृश पुष्पों को, चुन-चुन करके लाऊँ मैं।
जिनवर चरण कमल को जजते, निज गुण यश विकसाऊँ मैं।।
लौकांतिक सुर स्तुति करते, तीर्थंकर भगवान की।।जिनकी.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4
जिनवच अमृतसम चरु ताजे, घेवर मोदक लाऊँ मैं।
जिनवर आगे अर्पण करते, सब क्षुध व्याधि नशाऊँ मैं।।
गणधर गुरु भी करें वंदना, अतिशय महिमावान की।।जिनकी.।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4

तीर्थंकर की ज्योति प्रभा सम, दीप जलाकर लाऊँ मैं।
मोह अंधेरा दूर हटाकर, ज्ञान ज्योति प्रगटाऊँ मैं।।
चक्रवर्ति भी करें वंदना, अतिशय ज्योतिर्मान् की।।जिनकी.।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4

जिनतनु सम सुरभित वर चंदन, मिश्रित धूप जलाऊँ मैं।
कर्म भस्म हो जाय शीघ्र ही, निज आतम सुख पाऊँ मैं।।
सम्यग्दर्शन क्षायिक होवे, मिले राह उत्थान की।।जिनकी.।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4

जिनगुण सदृश मधुर ताजे फल, सेव आम्र अंगूर लिये।
जिनवर सन्मुख अर्पण करते, आत्म सौख्य हो प्रगट हिये।।
जिन पूजन से निजगुण प्रगटे, मिले युक्ति शिवधाम की।।जिनकी.।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय मोक्षफलप्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से कर लो पूजा, ऋषभदेव भगवान की।
जिनकी भक्ती विष अपहरती, ज्योति भरती ज्ञान की।।
वन्दे आदिजिनं-4

जल गंधादिक अर्घ्य सजाकर, स्वर्ण पुष्प बहु मिला लिया।
प्रभु चरणों में अर्घ्य चढ़ाकर, अनुपम सुख को प्राप्त किया।।
जिन भक्ती से प्रकटित होती, ज्योती आतम ज्ञान की।।जिनकी.।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

– शेरछंद –

हे नाथ! स्वर्ण भृंग में, आकाशगंग जल।
हम शांतिधार कर रहे, तुम पाद में विमल।।
तिहुँ लोक में सुख शांति हो, ये भावना करें।
हो मन पवित्र मेरा, यह याचना करें।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु सुमन समान सुरभि, पुष्प चुन लिये।
प्रभु पाद पंकरूह में, कुसुम अंजली किये।।
धन धान्य सौख्य संपदा, स्वयमेव आ मिले।
भक्ती से निज शक्ती बढ़े, शिवयुक्ति भी मिले।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

विषापहार स्तोत्र के, चालिस काव्य महान्।
पुष्पांजलि से पूजहूँ, जो अनंत गुण खान।।1।।

अथ मंडले चत्वारिंशत्कोष्ठानामुपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

प्रथम वलय में 8 अर्घ्य

– सोरठा –

नित्य निरंजन सिद्ध, परम हंस परमातमा।
अष्टगुणों से सिद्ध, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।2।।

अथ अष्टकाव्यगुणसमन्वित प्रथमवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

स्वात्मस्थितः सर्वगतः समस्त-व्यापारवेदी विनिवृत्तसंगः।
प्रवृद्धकालोप्यजरो वरेण्यः, पायादपायात्पुरुषः पुराणः।।1।।

अपने में ही स्थिर रहता है, और सर्वगत कहलाता।
सर्व-संग-त्यागी होकर भी, सब व्यापारों का ज्ञाता।।
काल-मान से वृद्ध बहुत है, फिर भी अजर अमर स्वयमेव।
विपदाओं से सदा बचावे, वह पुराण पुरुषोत्तम देव।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मस्थिताय केवलज्ञानकिरणैर्लोकालोकव्याप्ताय केवलिसमुद्घातसमयसर्वलोकव्यापिने पुराणपुरुषाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

परैरचिन्त्यं युगभारमेकः, स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः।
स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः, किमप्रवेशे विशति प्रदीपः।।2।।

जिसने पर-कल्पनातीत, युग-भार अकेले ही झेला।
जिसके सुगुन-गान मुनिजन भी, कर नहिं सके एक बेला।।
उसी वृषभ की विशद विरद यह, अल्पबुद्धि जन रचता है।
जहाँ न जाता भानु वहाँ भी, दीप उजेला करता है।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं युगारंभे प्राणिप्राणधारणोपायप्रदर्शिने युगादिब्रह्मणे अचिन्त्यमहिम्ने वृषभनामप्राप्ताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

तत्याज शक्रः शकनाभिमानं, नाहं त्यजामि स्तवनानुबंधम्।
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं, वातायनेनेव निरूपयामि।।3।।

शक्र सरीखे शक्तिवान ने, तजा गर्व गुण गाने का।
किन्तु मैं न साहस छोड़ूँगा, विरदावली बनाने का।।
अपने अल्पज्ञान से ही मैं, बहुत विषय प्रकटाऊँगा।
इस छोटे वातायन से ही, सारा नगर दिखाऊँगा।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं वातायनमिव स्वल्पबोधधारकत्वत्स्तुतिकरणोद्यमि-भाक्तिकस्योपरि कृपादृष्टिधारकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो, विद्वानशेषं निखलैरवेद्यः।
वक्तुं कियान्कीदृश इत्यशक्यः, स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु।।4।।

तुम सब-दर्शी देव किन्तु, तुमको न देख सकता कोई।
तुम सबके ही ज्ञाता पर, तुमको न जान पाता कोई।।
'कितने हो' 'कैसे हो' यों कुछ, कहा न जाता हे भगवान्।
इससे निज अशक्ति बतलाना, यही तुम्हारा स्तवन महान्।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदृश्वाऽदृश्यसर्वजगदज्ञेय परमस्तुत्यगुणसमन्विताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

व्यापीडितं बालमिवात्मदोषै-रुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वम्।
हिताहितान्वेषणमान्द्यभाजः, सर्वस्यजन्तोरसि बालवैद्यः।।5।।

बालक सम अपने दोषों से, जो जन पीड़ित रहते हैं।
उन सबको हे नाथ! आप, भवताप रहित नित करते हैं।।
यों अपने हित और अहित का, जो न ध्यान धरने वाले।
उन सबको तुम बाल-वैद्य हो, स्वास्थ्य-दान करने वाले।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वदोषपीड़ितहिताहितविवेकशून्यप्राणिनां बालवैद्याय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा, नद्यश्व इत्यच्युत! दर्शिताशः।
सव्याजमेवं गमयत्यशक्तः, क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय।।6।।

देने लेने का काम नहीं कुछ, आज कल्य परसों करके।
दिन व्यतीत करता अशक्त रवि, व्यर्थ दिलासा देकर के।।
पर हे अच्युत! जिनपति तुम यों, पल भर भी नहिं खोते हो।
शरणागत नत भक्तजनों को, त्वरित इष्ट फल देते हो।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं विनतजनाभिमतफलप्रदायकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि, त्वयि स्वभावाद्विमुखश्च दुःखम्।
सदावदातद्युतिरेकरूपस्तयो-स्त्वमादर्श इवावभासि।।7।।

भक्तिभाव से सुमुख आपके, रहने वाले सुख पाते।
और विमुख जन दुख पाते हैं, रागद्वेष नहिं तुम लाते।।
अमल सुदुतिमय चारु आरसी, सदा एकसी रहती ज्यों।
उसमें सुमुख विमुख दोनों ही, देखें छाया ज्यों की त्यों।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं भात्तिकाभात्तिकजनराग-द्वेषविरहितैकरूपादर्शवद् वीतरागाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

अगाधताब्धेः स यतः पयोधिर्मेरोश्च, तुङ्ग प्रकृतिःस यत्र।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव, व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि।।8।।

गहराई निधि की, ऊँचाई गिरि की, नभ-थल की चौड़ाई।
वहीं वहीं तक जहाँ-जहाँ तक, निधि आदिक दें दिखलाई।।
किन्तु नाथ! तेरी अगाधता, और तुंगता, विस्तरता।
तीन भुवन के बाहिर भी है, व्याप रही हे जगत्पिता।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं समुद्रसुमेरूगगनपृथिव्यापेक्षयाधिकगंभीरोत्तुंगविशाल-गुणविभूषिताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

–पूर्णार्घ्य–

मिलता है प्रभू भक्ती का, अवसर कभी कभी।
यह पुण्य का कमल तो, खिलता कभी कभी।।
मन वचन काय तीनों, योगों को जीत के।
जिनवर जिनेंद्र तुम हो, पूजूँ अभी अभी।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मस्थितादिविशालतान्तगुणविशिष्टाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

द्वितीय वलय के 16 अर्घ्य

–सोरठा–

धर्मचक्र प्रभु आप, तिहुँजग को उद्योतता।
पुष्पांजलि से आप, पूजत भेद विज्ञान हो।।

अथ षोडशकाव्यसमन्वित द्वितीयवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

तवानवस्था परमार्थतत्त्वम्, त्वया न गीतः पुनरागमश्च।
दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषीः, विरुद्धवृत्तोऽपि समंजसस्त्वम्।।1।।

अनवस्था को परम तत्त्व, तुमने अपने मत में गाया।
किन्तु बड़ा अचरज यह भगवन्, पुनरागमन न बतलाया।।
त्यों आशा करके अदृष्ट की, तुम सुदृष्ट फल को खोते।
यों तब चरित दिखें उलटे से, किन्तु घटित सब ही होते।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनवस्थास्वरूपपरमार्थतत्त्वोपदेशि-पुनरागमनविरहिताय दृष्टसुखत्यक्तादृष्टसुखोपायदर्शिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्, उध्दूलितात्मा यदि नाम शंभुः।
अशेत वृन्दोपहतोऽपि विष्णुः, किं गृह्यते येन भवानजागः।।2।।

काम जलाया तुमने स्वामी, इसीलिए यह उसकी धूल।
शंभु रमाई निज शरीर में, होय अधीर मोह में भूल।।
विष्णु परिग्रहयुत सोते हैं, लूटे उन्हें इसी से काम।
तुम निर्ग्रंथ जागते रहते, तुमसे क्या छीने वह वाम।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विजयिकामदेवभस्मसात्करणाय सर्वकालजाग्रते सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

स नीरजाः स्यादपरोऽघवान्वा, तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वम्।
स्वतोम्बुराशेर्महिमा न देव! स्तोकापवादेन जलाशयस्य।।3।।

और देव हों चाहे जैसे, पाप सहित अथवा निष्पाप।
उनके दोष दिखाने से ही, गुणी कहे नहिं जाते आप।।
जैसे स्वयं सरितपति की अति, महिमा बढ़ी दिखाती है।
जलाशयों के लघु कहने से, वह न कहीं बढ़ जाती है।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं सरागदेवदोषकथनानपेक्षिसमुद्रवत्स्वाभाविमहिमोपेताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

कर्मस्थितिं जन्तुरनेकभूमिम्, नयत्यमुं सा च परस्परस्य।
त्वं नेतृभावं हि तयोर्भवाब्धौ, जिनेन्द्र नौनाविकयोरिवाख्यः।।4।।

कर्मस्थिति को जीव निरन्तर, विविध थलों में पहुँचाता।
और कर्म इन जग-जीवों को, सब गतियों में ले जाता।।
यों नौका नाविक के जैसे, इस गहरे भव-सागर में।
जीव-कर्म के नेता हो प्रभु, पार करो कर कृपा हमें।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं जीवकर्मान्योन्यनेतृभावप्रतिपादकाय संसारसागरतरणोपाय-प्रदर्शकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्, धर्माय पापानि समाचरन्ति।
तैलाय बालाः सिकतासमूहं, निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः।।5।।

गुण के लिए लोग करते हैं, अस्ति-धारणादिक बहु दोष।
धर्म हेतु पापों में पड़ते, पशुवधादि को कह निर्दोष।।
सुखहित निज-तन को देते हैं, गिरिपातादि दुःख में ठेल।
यों जो तव मतबाह्य मूढ़ वे, बालू पेल निकालें तेल।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुखेच्छुकदुःखकारणोत्पादकमूढजनहितोपदेशिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

विषापहारं मणिमौषधानि, मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च।
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति, पर्यायनामानि तवैव तानि।।6।।

विषनाशक मणि मंत्र रसायन, औषध के अन्वेषण में।
देखो तो ये भोले प्राणी, फिरें भटकते वन-वन में।।
समझ तुम्हें ही मणिमंत्रादिक, स्मरण न करते सुखदायी।
क्योंकि तुम्हारे ही हैं ये सब, नाम दूसरे पर्यायी।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं विषापहारमण्यौषध-मंत्र-रसायनस्वरूपपर्याय-वाचिनामधारकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

चित्ते न किंचित्कृतवानसि त्वम्, देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम्।
हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रम्, सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः।।7।।

हे जिनेश! तुम अपने मन में, नहीं किसी को लाते हो।
पर जिस किसी भाग्यशाली के, मन में तुम आ जाते हो।।
वह निज-कर में कर लेता है, सकल जगत को निश्चय से।
तव मन से बाहर रहकर भी, अचरज है रहता सुख से।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वहृदयकमलधृत्सर्वजगद्हस्तकृतसामर्थ्यप्रापकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

त्रिकालतत्त्वं त्वमवैस्त्रिलोकी-स्वामीति संख्यानियतेरमीषाम्।
बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यत्, तेऽन्येऽपि चेद्व्याप्स्यदमूनपीदम्।।8।।

त्रिकालज्ञ त्रिजगत के स्वामी, ऐसा कहने से जिनदेव।
ज्ञान और स्वामीपन की, सीमा निश्चित होती स्वयमेव।।
यदि इससे भी ज्यादा होती, काल जगत की गिनती और।
तो उसको भी स्थापित करते, ये तव गुण दोनों सिरमौर।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिकाल-त्रैलोक्यज्ञानस्वामिने असंख्यातलोकप्रमाणकेवलज्ञान समन्विताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं, नागम्यरूपस्य तवोपकारी।
तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य, भानोरुद्विभ्रतश्छत्रमिवादरेण।।9।।

प्रभु की सेवा करके सुरपति, बीज स्वसुख के बोता है।
हे अगम्य अज्ञेय न इससे, तुम्हें लाभ कुछ होता है।।
जैसे छत्र सूर्य के सम्मुख, करने से दयालु जिनदेव।
करने वाले ही को होता, सुखकर आतपहर स्वयमेव।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं आतपहरछत्रमिव इन्द्रकृतप्रभुभक्तिस्वोपकारिगुणसमन्विताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः, स चेत्किमिच्छाप्रतिकूलवादः।
क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्वम्, तन्नो यथातथ्यमवेविचं ते।।10।।

कहाँ तुम्हारी वीतरागता, कहाँ सौख्यकारक उपदेश।
हो भी तो कैसे बन सकता, इन्द्रिय-सुख-विरुद्ध आदेश?।।
और जगत की प्रियता भी तब, संभव कैसे हो सकती?।
अचरज, यह विरुद्ध गुणमाला, तुममें कैसे रह सकती?।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वजगदुपेक्षकायापि सर्वोपदेशकसर्वजगत्प्रियत्वगुण-समन्विताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

तुङ्गात्फलं यत्तदकिंचनाच्च, प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः।
निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाद्रे-र्नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः।।11।।

तुम समान अति तुंग किन्तु, निधनों से जो मिलता स्वयमेव।
धनद आदि धनिकों से वह फल, कभी नहीं मिल सकता देव।
जल विहीन ऊँचे गिरिवर से, नाना नदियाँ बहती हैं।
किन्तु विपुल जलयुक्त जलधि से, नहीं निकलती, झरती हैं।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जलोच्चतमाद्रिनिर्गतनदीसम-अकिंचनायस्वभक्तजनसर्व-वांछितफलदानसमर्थाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

त्रैलोक्यसेवानियमाय दण्डं, दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य।
तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं, तत्कर्मयोगाद्यदि वा तवास्तु।।12।।

करो जगत-जन जिनसेवा, यह समझाने को सुरपति ने।
दंड विनय से लिया, इसलिए प्रातिहार्य पाया उसने।।
किन्तु तुम्हारे प्रातिहार्य वसु-विधि हैं सो आए कैंसे?।
हे जिनेन्द्र! यदि कर्मयोग से, तो वे कर्म हुए कैसे?।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं महिम्ना त्रैलोक्यसेवानियमरूपदण्डधृतइंद्रकृतप्रातिहार्याय तीर्थंकरप्रकृतिनिमित्तप्राप्तविभवाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः, श्रीमान्न कश्चित्कृपणं त्वदन्यः।
यथा प्रकाशस्थितमन्धकारस्थायी-क्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम्।।13।।

धनिकों को तो सभी निधन, लखते हैं, भला समझते हैं।
पर निधनों को तुम सिवाय जिन, कोई भला न कहते हैं।।
जैसे अन्धकारवासी, उजियाले वाले को देखे।
वैसे उजियाला वाला नर, नहिं तमवासी को देखे।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्धन-दुःखिजनानां दयादृष्ट्यवलोकिने मोहान्धकार-त्रस्तजनहितोपदेशप्रकाशप्रदायिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

स्ववृद्धिनिःश्वासनिमेषभाजि, प्रत्यक्षमात्मानुभवेपि मूढः।
किं चाखिलज्ञेयविवर्तिबोध-स्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः।।14।।

निज शरीर की वृद्धि श्वास-उच्छ्वास और पलकें झपना।
ये प्रत्यक्ष चिह्न हैं जिसमें, ऐसा भी अनुभव अपना।।
कर न सकें जो तुच्छबुद्धि वे, हे जिनवर! क्या तेरा रूप।
इन्द्रियगोचर कर सकते हैं, सकल ज्ञेयमय ज्ञानस्वरूप?।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं सकलपदार्थज्ञायकभगवत्स्वरूपाज्ञानिस्वात्मानुभव-मूढजनप्रतिबोधकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।14।।

तस्यात्मजस्तस्य पितेति देव, त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य।
तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं, पाणौ कृतं हेम पुनस्त्यजन्ति।।15।।

'उनके पिता' 'पुत्र हैं उनके', कर प्रकाश यों कुल की बात।
नाथ! आपकी गुण-गाथा जो, गाते हैं रट रट दिनरात।।
चारु चित्तहर चामीकर को, सचमुच ही वे बिना विचार।
उपल-शकल से उपजा कहकर, अपने कर से देते डार।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं नाभिराजपुत्र-भरतसम्राड्जनकादिकुलप्रकाशाद्यनपेक्षिणे स्वयमनन्तगुणादिस्वरूपमाहात्म्यप्राप्ताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर-श्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।15।।

दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः, सुरासुरास्तस्य महान्स लाभः।
मोहस्य मोहस्त्वयि को विरोद्धुम्, मूलस्य नाशो बलवद्विरोधः।।16।।

तीन लोक में ढोल बजाकर, किया मोह ने यह आदेश।
सभी सुरासुर हुए पराजित, मिला विजय यह उसे विशेष।।
किन्तु नाथ! वह निबल आपसे, कर सकता था कहाँ विरोध।
वैर ठानना बलवानों से, खो देता है खुद को खोद।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनस्थितसुरासुरमनुष्यादिविजयिमोहराज-प्रभावमूलोन्मूलिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

–पूर्णार्घ्य–

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भव सिंधु अगर तरना चाहो, जिन चरण शरण में आ जाना।।
युगस्रष्टा असि मषि कृषि आदिक, षट्क्रिया सिखायी जनता को।
वर धर्म अहिंसा सर्व श्रेष्ठ, उपदेशा धर्म सभी जन को।
इनके चरणों का आश्रय ले, दुःख से छुटकारा पा जाना।। यह मानव.।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुनरागनविरहितादि-मोहशत्रून्मूलनान्तषोडशकाव्य-गुणसमन्विताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्री ऋषभदेवाय पूर्णार्घ्यं.....।
शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

तृतीय वलय में 16 अर्घ्य

–दोहा–

प्रभु वचनामृत आपके, भरें स्वात्म विज्ञान।
पुष्पांजलि से पूजते, पाऊँ सौख्य महान।।

अथ षोडशकाव्यसमन्वित तृतीयवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेः, चतुर्गतीनां गहनं परेण।
सर्वं मया दृष्टमिति स्मयेन, त्वं मा कदाचित् भुजमालुलोकः।।1।।

तुमने केवल एक मुक्ति का, देखा मार्ग सौख्यकारी।
पर औंरों ने चारों गति के, गहन पंथ देखे भारी।।

इससे सब कुछ देखा हमने, यह अभिमान ठान करके।
हे जिनवर! नहिं कभी देखना, अपनी भुजा तान करके।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्गतिगहनमार्गदर्शीश्वरापेक्षया केवलैकमोक्षमार्गदर्शिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

स्वर्भानुरर्कस्य हविर्भुजोऽम्भः, कल्पान्तवातोऽम्बुनिधेर्विघातः।
संसारभोगस्य वियोगभावो, विपक्षपूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये।।2।।

रवि को राहु रोकता है, पावक को वारि बुझाता है।
प्रलयकाल का प्रबल पवन, जलनिधि को नाच नचाता है।।
ऐसे ही भव-भोगों को, उनका वियोग हरता स्वयमेव।
तुम सिवाय सबकी बढ़ती पर, घातक लगे हुए हैं देव।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूर्यविरोधिराहु-अग्निविरोधिजल-संसारभोगविरोधि-वियोगभावप्रतिपादनकुशलाय स्वयं विपक्षगणरहिताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्, तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति।
हरिन्मणिं काचधिया दधानः।, तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः।।3।।

बिन जाने भी तुम्हें नमन, करने से जो फल फलता है।
वह औरों को देव मान, नमने से भी नहिं मिलता है।।
ज्यों मरकत को काँच मानकर, करगत करने वाला नर।
समझ सुमणि जो काच गहे, उसके सम रहे न खाली कर।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्वद्गुणज्ञानविरहितनमस्कृतिमात्रेणापि ईप्सितफलप्रापक-समर्थाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

प्रशस्तवाचश्चतुराः कषायैः, दग्धस्य देवव्यवहारमाहुः।
गतस्य दीपस्य हि नंदितत्वम्, दृष्टं कपालस्य च मंगलत्वम्।।4।।

विशद मनोज्ञ बोलने वाले, पंडित जो कहलाते हैं।
क्रोधादिक से जले हुए को, वे यों 'देव' बताते हैं।।

जैसे 'बुझे हुए' दीपक को, 'बढ़ा हुआ' सब कहते हैं।
और कपाल विघट जाने को, 'मंगल हुआ' समझते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं कषायदग्धजनानां देवशब्दसंबोधनप्रशस्तवाक्यकुशल-जनसत्यमार्गप्रतिबोधकाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तम्, हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः।
निर्दोषतां के न विभावयंति, ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण।।5।।

नयप्रमाणयुत अतिहितकारी, वचन आपके कहे हुए।
सुनकर श्रोताजन तत्त्वों के, परिशीलन में लगे हुए।।
वक्ता का निर्दोषपना, जानेंगे क्यों नहिं हे गुणमाल।
ज्वरविमुक्त जाना जाता है, अच्छे स्वर से ही तत्काल।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं परस्परविरोधविरहितसर्वहितकरस्याद्वादवचनोपदेशिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

न क्वापि वांछा वक्तृते च वाक्ते, काले क्वचित्कोऽपि तथा नियोगः।
न पूरयाम्यम्बुधिमित्युदंशुः, स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति।।6।।

यद्यपि जग के किसी विषय में, अभिलाषा तव रही नहीं।
तो भी विमल वाणी तव खिरती, यदा कदाचित् कहीं-कहीं।।
ऐसा ही कुछ है नियोग यह, जैसे पूर्णचन्द्र जिनदेव।
ज्वार बढ़ाने को न ऊगता, किन्तु उदित होता स्वयमेव।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयमुदितपूर्णचंद्राम्बुधिपूरमिव इच्छाविरहितसर्वजनहित-करदिव्यध्वनिप्रकटितकरणाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

गुणा गभीराः परमाः प्रसन्नाः, बहुप्रकारा बहवस्तवेति।
दृष्टोऽयमन्तस्तवने न तेषाम्, गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति।।7।।

हे प्रभु! तेरे गुण प्रसिद्ध हैं, परमोत्तम हैं, गहरे हैं।
बहु प्रकार हैं, पार रहित हैं, निज स्वभाव में ठहरे हैं।।

स्तुति करते करते यों देखा, छोर गुणों का आखिर में।
इनमें जो नहिं कहा रहा वह, और कौन गुण जाहिर में।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं गंभीर-परम-प्रसन्न-बहुप्रकार-बहु-अन्तविरहित-अनन्तगुण-स्वामिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या, स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि।
स्मरामि देवं! प्रणमामि नित्यम्, केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम्।।8।।

किन्तु न केवल स्तुति करने से, मिलता है निज अभिमत फल।
इससे प्रभु को भक्तिभाव से, भजता हूँ प्रतिदिन प्रतिपल।।
स्मृति करके सुमरन करता हूँ, पुनि विनम्र हो नमता हूँ।
किसी यत्न से भी अभीष्ट-साधन की इच्छा रखता हूँ।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुति-भक्ति-स्मृति-प्रणति इत्यादि उपायैः अभिमतफल-प्राप्त्यर्थं प्रयत्नतत्परभाक्तिकजनमनोरथपूर्णीकराय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

ततस्त्रिलोकीनगराधिदेवं, नित्यं परंज्योतिरनंतशक्तिम्।
अपुण्यपापं परपुण्यहेतुं, नमाम्यहं वन्द्यमवन्दितारम्।।9।।

इसीलिए शाश्वत तेजोमय, शक्ति अनन्तवन्त अभिराम।
पुण्य पाप बिन, परम पुण्य के, कारण परमोत्तम गुणधाम।।
वन्दनीय, पर जो न और की, करें वंदना कभी मुनीश।
ऐसे त्रिभुवन-नगर-नाथ को, करता हूँ प्रणाम धर सीस।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं नित्य-परंज्योति-रनन्तशक्तिस्वरूपत्रैलोक्याधिपतये पुण्यपापविरहितपरपुण्यहेतवे सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

अशब्दमस्पर्शमरूपगन्धं, त्वां नीरसं तद्विषयावबोधम्।
सर्वस्य मातारममेयमन्यै-र्जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि।।10।।

जो नहिं स्वयं शब्द रस सपरस, अथवा रूप गंध कुछ भी।
पर इन सब विषयों के ज्ञाता, जिन्हें केवली कहें सभी।।

सब पदार्थ जो जानें पर न, जान सकता कोई जिनको।
स्मरण में न आ सकते हैं जो, करता हूँ सुमरन उनको।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं शब्द-गंध-स्पर्श-रूप-रसविरहिताय अन्यैरज्ञेयाय सर्वज्ञजिनेन्द्राय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

अगाधमन्यैर्मनसाप्यलंघ्यं, निष्किंचनं प्रार्थितमर्थवद्भिः।
विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं, पतिं जिनानां शरणं व्रजामि।।11।।

लंघ्य न औरों के मन से भी, और गूढ़ गहरे अतिशय।
धनविहीन जो स्वयं किन्तु, जिनका करते धनवान विनय।।
जो इस जग के पार गये पर, पाया जाय न जिनका पार।
ऐसे जिनपति के चरणों की, लेता हूँ मैं शरण उदार।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थिभिः प्रार्थ्यनिकिंचनाय अदृष्टपारविश्वपारंगताय जिनपतये सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

त्रैलोक्यदीक्षागुरवे नमस्ते, यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत।
प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रिकल्पः, पश्चान्न मेरुः कुलपर्वतोऽभूत।।12।।

मेरु बड़ा सा पत्थर पहले, फिर छोटा सा शैलस्वरूप।
और अन्त में हुआ न कुलगिरि, किन्तु सदा से उन्नत रूप।।
इसी तरह जो वर्धमान है, किन्तु न क्रम से हुआ उदार।
सहजोन्नत उस त्रिभुवन-गुरु को, नमस्कार है बारम्बार।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं मेरुपर्वतमिव स्वयमेव त्रैलोक्यदीक्षागुरवे सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा, न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम्।
न लाघवं गौरवमेकरूपं, वंदे विभुं कालकलामतीतम्।।13।।

स्वयं प्रकाशमान जिस प्रभु को, रात दिवस नहिं रोक सका।
लाघव गौरव भी नहिं जिसको, बाधक होकर टोक सका।।

एक रूप जो रहे निरन्तर, काल-कला से सदा अतीत।
भक्तिभार से झुककर उसकी, करूँ वंदना परम पुनीत।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयंप्रकाशरूप-लाघवगौरवविरहितैकरूपाय काल-कलामतीताय विभवे सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

इति स्तुतिं देव! विधाय, दैन्याद्वरं न याचे त्वमुपेक्षकोऽसि।
छायातरुं संश्रयतः स्वतः, स्यात्कश्छायया याचितयात्मलाभः।।14।।

इस प्रकार गुणकीर्तन करके, दीन भाव से हे भगवान।
वर न मांगता हूँ मैं कुछ भी, तुम्हें वीतरागी वर जान।।
वृक्षतले जो जाता है, उस पर छाया होती स्वयमेव।
छाँह-याचना करने से फिर, लाभ कौन सा है जिनदेव?।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतिकर्त्रे याचनाविरहितायापि सर्वाभीप्सितफलप्रदायिने सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।14।।

अथास्ति दित्सा यदि वोपरोध-स्त्वय्येव सक्तां दिश भक्तिबुद्धिम्।
करिष्यते देव! तथा कृपां मे, को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः।।15।।

यदि देने की इच्छा ही हो, या इसका कुछ आग्रह हो।
तो निज चरन-कमल-रत निर्मल, बुद्धि दीजिए नाथ अहो।।
अथवा कृपा करोगे ही प्रभु, शंका इस में जरा नहीं।
अपने प्रिय सेवक पर करते, कौन सुधी जन दया नहीं।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्वय्येव भक्तिबुद्धियाचनासफलीकराय आत्मपोष्य-शिष्याचार्याय परमकृपालवे सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।15।।

– पुष्पिताग्रा छंद –

वितरति विहिता यथाकथञ्चिज्जिन, विनताय मनीषितानि भक्तिः।
त्वयि नुतिविषया पुनर्विशेषाद्दिशति, सुखानि यशो धनं जयं च।।16।।

यथाशक्ति थोड़ी सी भी, की हुई भक्ति श्रीजिनवर की।
भक्तजनों को मनचाही, सामग्री देती जगभर की।।

इससे गूंथी गई स्तवन में, यह विशेषता से रुचिकर।
'प्रेमी' देगी सौख्य सुयश को, तथा 'धनंजय' को शुचितर।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्वत्पदकमलभाक्तिकाय मे सर्वसौख्यं यशो धनं जयं दातुं समर्थाय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

– पूर्णार्घ्य –

जिनवर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से अर्घ्य चढ़ाते चलो, धन सुख संपति पा जावोगे।।
सौ इन्द्रों से वंदित प्रभु तुम, त्रिभुवन के गुरू कहाते हो।
श्रद्धा से इनका नाम लिये, भवसागर से तिर जावोगे।।जिन.।।
मुझमें भी केवलज्ञान भरा, यह ज्ञानावरण उसे ढकता।
कैसे विनाश हो कर्मों का, भक्ती से युक्ती पावोगे।।जिन.।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं एकमात्रमोक्षमार्गदर्श्यादिभाक्तिकजनाभीप्सितफलदानपर्यन्त-षोडशकाव्यगुणसमन्विताय सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

– पूर्णार्घ्य-शंभु छंद –

एकेक काव्य भी गुण अनंत से, भरित अतुल महिमाशाली।
मैं अल्पबुद्धि नहिं समझ सकूँ, फिर भी भक्ती गुणमणिमाली।।
इन चालिस काव्यों को विधिवत्, अर्चन कर मैं पूर्णार्घ्य करूँ।
संपूर्ण अमंगल विघ्न नशें, अतिशय परमानंद प्राप्त करूँ।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकरश्रीऋषभदेवाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

मंत्र जाप्य –

1. ॐ ऋषभाय अमृतविंदवे ठः ठः ठः स्वाहा।
2. ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर श्रीऋषभदेवाय नमः।
3. ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवाय सर्वसिद्धिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

जयमाला

– अनंगशेखर छंद –

जयो जिनेन्द्र! आप ही महान देवदेव हो,
समस्त इंद्र देव चक्रवर्ति शीश नावते।
जयो जिनेन्द्र! आप ही समस्त विश्ववंद्य हो,
मुनीन्द्र औ गणीन्द्र साधुवृंद कीर्ति गावते।।
जयो जिनेन्द्र! आपकी अपूर्व ज्ञान ज्योति में,
त्रिलोक औ अलोक एक साथ भासते रहें।
जयो जिनेन्द्र! आपकी अपूर्व दिव्यदृष्टि में,
त्रिकाल की अनंत वस्तुएँ विभासती रहें।।1।।

जयो जिनेन्द्र! आपकी ध्वनी अनक्षरी खिरे,
तथापि संख्य भाषियों को बोध है करा रही।
जयो जिनेन्द्र! आपका अचिन्त्य ये महात्म्य देख,
सुभक्ति से प्रजा समस्त आप-आप आ रही।।
जिनेश! आपकी सभा असंख्य जीव से भरी,
अनंत वैभवों समेत भव्य चित्त मोहती।
जिनेश! आपके समीप साधुवृंद औ गणीन्द्र,
केवली मुनीन्द्र और आर्यिकाएँ शोभतीं।।2।।

सुरेन्द्र देवियों की टोलियाँ असंख्य आ रहीं,
खगेश्वरों की पंक्तियाँ अनेक गीत गा रहीं।
सुभूमिगोचरी मनुष्य नारियाँ तमाम हैं,
पशू तथैव पक्षियों की टोलियाँ भी आ रहीं।।
सु बारहों सभा स्वकीय ही स्वकीय में रहें,
असंख्य भव्य बैठके जिनेश देशना सुनें।
सुतत्त्व सात नौ पदार्थ पाँच अस्तिकाय और,
द्रव्य छह स्वरूप को भले प्रकार से गुनें।।3।।
प्रभो! महात्मय आपका अपूर्व है अनंत है,
समस्त ईति भीति और आपदाएँ दूर हों।

पहाड़ टूट के पड़े व भूमिकंप हो महा,
तथापि कष्ट रंच ना यही जिनेन्द्र भक्ति हो।
नदी प्रवाह पूर हो, गिरें जहाज ना मिलें,
तथापि भक्ति नाव से तिरें महा समुद्र भी।।
न नीर कष्ट दे सके, जिनेन्द्र नाम मंत्र से,
पहाड़ बर्फ के गिरें न दुःख हो वहाँ कभी।।4।।

त्रिचक्रिका चतुष्चक्रिका भिड़न्त[1] हो जबे,
गिरें सुदूर जायके न चोट भी जरा लगे।
उड़े अकाश वायुयान से यदी गिरें कभी,
जिनेन्द्र मंत्र जाप से खरोंच भी तो ना लगे।।
विषाक्त वाष्प जो क्षरें शरीर मृत्यु ग्रास हो,
तथापि भक्त आपके न रंच वेदना धरें।
अनेक कष्टदायि संकटादि आ पड़ें यदी।
तथापि भक्ति के प्रभाव भक्त दुःख ना भरें।।5।।

ज्वरादि पीलिया व कुष्ठ रक्तचाप रोग हों,
अनेक हृदय रोग कैंसरादि व्याधियाँ घनी।
करोड़ पाँच अड़सठे सुलाख निन्यानवे,
हजार पाँच सौ चुरासि संख्य व्याधियाँ भणी।।
बस एक चक्षुमात्र में छ्यानवे कुरोग हैं,
शरीर सर्व में यदी समस्त रेाग साथ हों।
जिनेन्द्र पाद धूलि शीश पे धरें उसी क्षणे,
समस्त रोग दूर हों शरीर पूर्ण स्वस्थ हो।।6।।

पिशाचिनी व डाकिनी समस्त भूत व्यन्तरा,
अनेक शत्रु देव भी न रंच कष्ट दे सकें।
प्रसिद्ध आदिनाथ मंत्र के प्रभाव से यहाँ,
समस्त शत्रु मित्र हों अनेक रत्न भेंट दें।।
विषैल सर्प बिच्छु आदि क्रोध से डसें यदी,
न विष चढ़े जिनेन्द्र भक्ति के प्रभाव से कभी।

1. बस, स्कूटर के एक्सीडेंट

अनेक क्रूर सिंह-व्याघ्र-हस्ति आदि जंतु भी,
जिनेन्द्र नाम जीभ पे न कष्ट दे सकें कभी।।7।।

अनंत बार मैं नमूँ जिनेन्द्र! आप चर्ण में,
अनंत दुःख दूर हों, अनंत सौख्य प्राप्त हो।
अनंत तीर्थनाथ जो हुए अनंत होयेंगे,
असंख्य तीर्थधाम भी यहाँ प्रसिद्धि प्राप्त हों।।
अनंत अरीहंत सिद्ध सूरि उपाध्याय हैं,
अनंत साधु जैनधर्म श्रुत असंख्य लोक में।
असंख्य जैन मूर्तियाँ जिनालया असंख्य हैं,
असंख्य ये त्रिकाल से नमूँ अनंतबार मैं।।8।।

सरस्वती यदी समुद्रनीर स्याहि ले बना,
त्रिलोक को बनाय ग्रंथ आप कीर्ति को लिखे।
अनंतकाल तक विराम ले नहीं तथापि वो,
अनन्त कीर्ति आप की तथापि माँ न लिख सके।।
सुनी सुकीर्ति आपकी अतेव मैं लिया शरण,
दया कि दृष्टि कीजिए न देर कीजिए प्रभो!
त्रिकाल दुःख वार्धि से स्वपाद में निवास दो,
अनंतज्ञान दर्श सौख्यवीर्य दीजिए प्रभो!।।9।।

दोहा– विषापहार विधान पति, ऋषभदेव भगवान।
'ज्ञानमती' कैवल्य कर, दीजे सिद्धस्थान।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वविषापहारिणे आदितीर्थंकर श्री ऋषभदेवाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छंद– जो भव्य जीव विषापहार, विधान चालिस दिन करें।
श्री धनंजय कवि रचित, स्तोत्र के गुण उच्चरें।।
वे रोग शोक दरिद्र हर के, पूर्ण स्वस्थ तनू धरें।
निज 'ज्ञानमति' रविकिरण से, त्रिभुवन कमल विकसित करें।।11।।

।।इत्याशीर्वादः।।

श्री विषापहारविधानं समाप्तम्।

विषापहारविधान प्रशस्तिः

–शंभु छंद–

त्रिभुवन में धर्म वही उत्तम, जो श्रेष्ठ सुखों में धरता है।
सांसारिक सभी सौख्य देकर, मुक्ती पद तक पहुँचाता है।।
इस रत्नत्रयमय धर्मतीर्थ के, कर्ता तीर्थंकर बनते।
इनको प्रणमूँ मैं बार बार, ये सर्व आधि व्याधी हरते।।1।।

श्री महावीर के शासन में, श्री कुंदकुंद आम्नाय प्रथित।
सरस्वतीगच्छ गण बलात्कार से, जैन दिगम्बर धर्म विशद।।
इस परम्परा में सदी बीसवीं, के आचार्य प्रथम गुरुवर।
चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तीसागर सबके गुरू प्रवर।।2।।

इन प्रथमशिष्य पट्टाधिप श्री, गुरु वीरसागराचार्य हुए।
मुझको ये आर्यिका ज्ञानमती, करके अन्वर्थक नाम दिये।।
इन रत्नत्रय दाता गुरु को, है मेरा वंदन बार बार।
माँ सरस्वती को नित्य नमूँ, जिनका मुझ पर है बहूपकार।।3।।

वीराब्द पचीस सौ बत्तिस में, शुभ माघ कृष्ण तृतिया तिथि में।
श्री विषापहार विधान पूर्ण, कर दिया सुप्रातः बेला में।।
आर्यिकारत्न श्रेयांसमती, माताजी की सुप्रेरणा से।
यह अतिशायी पूजा विधान, रच दिया ऋषभप्रभु भक्ती से।।4।।

इस दुषमकाल के अन्त समय तक, जैनधर्म जयवंत रहे।
इस हस्तिनागपुर में तब तक, यह जंबूद्वीप स्थायि रहे।।
तब तक यह मेरी कृति विधान की, भव्यों को संतुष्ट करे।
मुझ 'ज्ञानमती' केवल करके, मुझ में जिनगुण संपत्ति भरे।।5।।

इति श्री विषापहारविधान प्रशस्तिः संपूर्णा जाता।

विषापहार विधान की मंगल आरती

रचयित्री - आर्यिका चन्दनामती माताजी

आरति करो रे,
श्री विषापहार मण्डल विधान की आरति करो रे।।टेक.।।
जिस स्तोत्र के अतिशय से, सर्पादिक के विष दूर भगे।
जिस स्तोत्र के पढ़ने से, सम्यग्दर्शन की ज्योति जगे।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
सम्यक्त्व सहित प्रभु भक्ति धाम की आरति करो रे।।1।।
कवी धनंजय के सुत को इक दिन इक सांप ने काट लिया।
इस स्तोत्र की रचना से कविवर ने वह विष शान्त किया।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
इस चमत्कारि स्तोत्र पाठ की आरति करो रे।।2।।
चालिस छन्दों में जिनवर श्री ऋषभदेव को वंदन है।
भव-भव के कर्मों का विष अपहरने में जो सक्षम हैं।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
विष अपहर्ता ऋषभदेव की आरति करो रे।।3।।
गणिनी माता ज्ञानमती ने, इसका एक विधान रचा।
एक-एक पद के मंत्रों में, देखो कितना सार भरा।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
तनु रोग विनाशक शक्तिधाम की आरति करो रे।।4।।
एक दिवस में इस विधान को करके आतमलाभ करो।
चालिस दिन तक भी करके ''चन्दनामती'' फल प्राप्त करो।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
प्रभु ऋषभदेव के गुण निधान की आरति करो रे।।5।।

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की पूजन

रचयित्री–**आर्यिका चन्दनामती**

–स्थापना–

पूजन करो जी-

श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी की, पूजन करो जी।
जिनकी पूजन करने से, अज्ञान तिमिर नश जाता है।
जिनकी दिव्य देशना से, शुभ ज्ञान हृदय बस जाता है।।
उनके श्री चरणों में, आह्वानन स्थापन करते हैं।
सन्निधिकरण विधीपूर्वक, पुष्पांजलि अर्पित करते हैं।।
पुष्पांजलि अर्पित करते हैं . . . .

पूजन करो जी,

श्री गणिनी ज्ञानमती माताजी की पूजन करो जी।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मातः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मातः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मातः! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

–अष्टक–

ज्ञानमती जी नाम तुम्हारा, ज्ञान सरित अवगाहन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।
मुझ अज्ञानी ने माँ जबसे, तेरी छाया पाई है।
तब से दुनिया की कोई छवि, मुझको लुभा न पाई है।।
ज्ञानामृत जल पीने हेतू, तव पद में मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।1।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन और सुगंधित गंधों, की वसुधा पर कमी नहीं।
लेकिन तेरी ज्ञान सुगन्धी, से सुरभित है आज मही।।

उसी ज्ञान की सौरभ लेने, को आतुर मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।2।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के नश्वर वैभव से, मैंने शाश्वत सुख था चाहा।
पर तेरे उपदेशों से, वैराग्य हृदय मेरे भाया।।
अक्षय सुख के लिए मुझे, तेरा प्रवचन ही साधन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।3।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कामदेव ने निज बाणों से, जब युग को था ग्रसित किया।
तुमने अपनी कोमल काया, लघुवय में ही तपा दिया।।
इसीलिए तव पद में आकर, शान्त हुआ मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।4।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मानव सुन्दर पकवानों से, अपनी क्षुधा मिटाते हैं।
लेकिन उनके द्वारा भी नहिं, भूख मिटा वे पाते हैं।।
आत्मा की संतृप्ति हेतु, तव वाणी मेरा भोजन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।5।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युत के दीपों से जग ने, गृह अंधेर मिटाया है।
ज्ञान का दीपक लेकर तुमने, अन्तरंग चमकाया है।।
घृत का दीपक लेकर माता, हम करते तव प्रणमन हैं।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।6।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने ही अब तक मुझको, यह भव भ्रमण कराया है।
तुमने उन कर्मों से लड़कर, त्याग मार्ग अपनाया है।।
धूप जलाकर तेरे सम्मुख, हम करते तव पूजन हैं।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।7।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कितने खट्टे मीठे फल को, मैंने अब तक खाया है।
तुमने माँ जिनवाणी का, अनमोल ज्ञानफल खाया है।।
तव पूजनफल ज्ञाननिधी, मिल जावे यह मेरा मन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।8।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पिच्छि कमण्डलुधारी माता, नमन तुम्हें हम करते हैं।
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, अर्घ्य समर्पण करते हैं।।
युग की पहली ज्ञानमती के, चरणों में अभिवन्दन है।
तेरी पावन प्रतिभा लखकर, मेरा मन भी पावन है।।9।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शेरछंद–

हे माँ तू ज्ञान गंग की पवित्र धार है।
तेरे समक्ष गंगा की लहरें बेकार हैं।।
उस धार की कुछ बूँदों से जलधार मैं करूँ।
वह ज्ञान नीर मैं हृदय के पात्र में भरूँ।।

शांतये शांतिधारा . . .।।

स्याद्वाद अनेकान्त के उद्यान में माता।
बहुविध के पुष्प खिले तेरे ज्ञान में माता।।
कतिपय उन्हीं पुष्पों से मैं पुष्पांजलि करूँ।
उस ज्ञानवाटिका में ज्ञान की कली बनूँ।।

दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत् . . .।।

जयमाला

–दोहा–

ज्ञानमती को नित नमूँ, ज्ञान कली खिल जाय।
ज्ञानज्योति की चमक में, जीवन मम मिल जाय।।

धुन –नागिन-मेरा मन डोले . . .।

हे बालसती, माँ ज्ञानमती, हम आए तेरे द्वार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।
शरद पूर्णिमा दिन था सुन्दर, तुम धरती पर आईं।
सन् उन्निस सौ चौंतिस में माँ, मोहिनि जी हर्षाईं।। माता...।।
थे पिता धन्य, नगरी भी धन्य, मैना के इस अवतार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।1।।

बाल्यकाल से ही मैना के, मन वैराग्य समाया।
तोड़ जगत के बंधन सारे,छोड़ी ममता माया।। माता....।।
गुरु संग मिला, अवलम्ब मिला, पग बढ़े मुक्ति के द्वार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।2।।

शान्तिसिन्धु की प्रथम शिष्यता, वीरसिन्धु ने पाई।
उनकी शिष्या ज्ञानमती जी ने ,ज्ञान की ज्योति जलाई।। माता....।।
शिवरागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।3।।

माता तुम आशीर्वाद से, जम्बूद्वीप बना है।
हस्तिनापुर की पुण्यधरा पर, कैसा अलख जगा है।। माता....।।
ज्ञान ज्योति चली, जग भ्रमण करी, तेरे ही ज्ञान आधार पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।4।।

तीर्थ अयोध्या-मांगीतुंगी, का विकास करवाया।
फिर प्रयाग में तपस्थली का, नूतन तीर्थ बनाया।। माता.....।।
प्रभु समवसरण, रथ हुआ भ्रमण, श्री ऋषभदेव के नाम का,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।5।।

कुण्डलपुर तीरथ विकास की, नई प्रेरणा आई।
महावीर की जन्मभूमि में, अगणित खुशियाँ छाईं।। माता...।।
महावीर ज्योति, रथ से उद्योत, कर दिया पुनः संसार को,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।6।।
तीर्थंकर की जन्मभूमियों, का विकास करवाया।
पार्श्वनाथ के उत्सव का फिर, तुमने बिगुल बजाया।। माता.....।।
संदेश दिया, उपदेश दिया, भावना हुई साकार है,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।7।।
यथा नाम गुण भी हैं वैसे, तुम हो ज्ञान की दाता।
तुम चरणों में आकर के हर, जनमानस हर्षाता।।माता....।।
साहित्य सृजन, श्रुत में ही रमण, कर चलीं स्वात्म विश्राम पे,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।8।।
गणिनी माता के चरणों में, यही याचना करते ।
कहे ''चन्दनामती'' ज्ञान की , सरिता मुझमें भर दे।।माता.....।।
ज्ञानदाता की, जगमाता की, वन्दना करूँ शतबार मैं,
शुभ अर्घ्य संजोकर लाए हैं।।9।।

–दोहा–

लोहे को सोना करे, पारस जग विख्यात।
तुम जग को पारस करो, स्वयं ज्ञानमती मात।।10।।

ॐ ह्रीं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती मात्रे जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–शंभुछंद–

जो गणिनी ज्ञानमती माता की, करें सदा पूजा रुचि से।
वे ज्ञानामृत से निज मन को, पावन कर अभिसिंचित करते।।
इस शरदपूर्णिमा के चन्दा की, ज्ञानरश्मियाँ बढ़ें सदा।
''चन्दनामती'' युग युग तक यह, आलोक जगत को मिले सदा।।

।। इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः ।।

भजन

- ब्र. कु. आस्था जैन (संघस्थ)

श्री विषापहार का पाठ, करो सब ठाठ, भक्ति मन लाके
अरिहंत सिद्ध आराधें.....
जो मन से पाठ रचाते हैं, वे मनवाँछित फल पाते हैं
इक दिन वे मुक्ती लक्ष्मी पा जाते
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।1।।
तीर्थंकर का जब जन्म होता है, चहुँ ओर सुभिक्ष सुखद होता,
तब धनकुबेर भी रत्नवृष्टि कर हरषाते
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।2।।
सौधर्म इन्द्र जिन शिशु लाते, पांडु शिला अभिषव करते
इक हजार अठ कलशों से प्रभु न्हवन कराते,
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।3।।
इस युग के प्रथम तीर्थंकर हैं, आदिब्रह्मा जिनवर जिन हैं
प्रभु इक सहस्र अठ नामों से जाने जाते,
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।4।।
तीर्थंकर समवसरण रचता, द्वादशगण युत वैभव रहता,
प्रभु दिव्यध्वनि से पाप सभी नश जाते,
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।5।।
मणि मंत्र तंत्र औषध आदी, प्रभु भक्ति में है सब आती
प्रभु भक्ती से सब विष भी दूर हो जाते,
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।6।।
कलियुग में हैं माँ ज्ञानमती, प्रतिकृति हैं माँ सरस्वती
इनके आराधन से दोष सभी नश जाते
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।7।।
'आस्था' प्रभु की नित भक्ति करूँ, मन में बस इक ही आश धरूँ
गुरु भक्ति ही भवदधि नौका बन जाते,
अरिहंत सिद्ध आराधें।।श्री विषापहार.....।।8।।

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

तर्ज-फूलों सा चेहरा तेरा.....

इस युग की माँ शारदे, तू धर्म की प्राण है।
ज्ञानमती नाम है, ज्ञान की तू खान है, चारित्र परिधान है।।टेक.।।

महावीर प्रभु के शासन में अब तक,
कोई भी नारी न ऐसी हुई।
साहित्य लेखन करने की शक्ति,
तुझमें न जाने कैसे हुई।।
शास्त्र पुराणों में, भक्ति विधानों में, तेरा प्रथम नाम है विश्व में-2
कलियुग की माँ भारती, पूनो का तू चांद है,
ज्ञानमती नाम है, ज्ञान की तू खान है, चारित्र परिधान है।।
इस युग.....।।1।।

तीर्थंकरों की जन्मभूमि का,
उत्थान माता तुमने किया।
हस्तिनापुरी में जंबूद्वीप को,
साकार माता तुमने किया।।
तीर्थ अयोध्या की, कीर्ति प्रसारित की, मस्तकाभिषेक आदिनाथ का हुआ-2
तू जग की वागीश्वरी, धरती का सम्मान है,
ज्ञानमती नाम है, ज्ञान की तू खान है, चारित्र परिधान है।।
इस युग.....।।2।।

गणिनी शिरोमणि तेरी तपस्या,
का लाभ इस वसुधा को मिला।
चारित्र चक्री गुरु के सदृश ही,
''चंदना'' इक पुष्प जग में खिला।
पुष्प महकता है, चाँद चमकता है, ज्ञानमती माता के रूप में-2
युग युग तू जीती रहे, हम सबके अरमान हैं,
ज्ञानमती नाम है, ज्ञान की तू खान है, चारित्र परिधान है।।
इस युग.....।।3।।

* श्री विषापहार विधान *

श्री ऋषभदेव स्तुति

हे आदिनाथ! हे आदीश्वर! हे ऋषभ जिनेश्वर! नाभिललन!
पुरुदेव! युगादि पुरुष ! ब्रह्मा, विधि और विधाता मुक्तिकरण।।
मैं अगणित बार नमूँ तुमको, वन्दूँ ध्याऊँ गुणगान करूँ।
स्वात्मैक परम आनन्दमयी, सुज्ञान सुधा का पान करूँ।।1।।

आषाढ़ बदी दुतिया तिथि थी, मरुदेवी गर्भ पधारे थे।
श्री ह्री धृति आदि देवियों ने, माता के चरण पखारे थे।।
शुभ चैतबदी नवमी तिथि थी, भगवान यहाँ जब थे जन्में।
तब मेरु सुदर्शन के ऊपर, अभिषेक किया था इन्द्रों ने।।2।।

वो घड़ी धन्य थी धन्य दिवस, धन धन्य अयोध्या नगरी थी।
श्री नाभिराज भी धन्य तथा, तब धन्य प्रजा भी सगरी थी।।
प्रभु ने असि मसि आदिक किरिया, उपदेशी आदि विधाता थे।
थे युग के आदिपुरुष ब्रह्मा, श्रावक मुनि मार्ग विधाता थे।।3।।

थे कनक वर्ण धनु पंच शतक, तनु वे युग के अवतारी थे।
आयू चौरासी लाख पूर्व, धारक वृष लक्षण धारी थे।।
सब परिग्रह ग्रंथी को तजकर, निर्ग्रंथ दिगम्बर रूप धरा।
वह चैत्र वदी नवमी शुभ थी, जिस दिन प्रभु ने कचलोंच करा।।4।।

षट् मास योग में लीन रहे, लंबित भुज नासादृष्टी थी।
निज आत्म सुधारस पीते थे, तन से बिल्कुल निर्ममता थी।।
फिर ध्यान समाप्त किया प्रभु ने, आहार विधी बतलाने को।
भवसिंधू में डूबे जन को, मुनिमार्ग सरल समझाने को।।5।।

षट् मास भ्रमण करते-करते, प्रभु हस्तिनागपुर में आये।
सोमप्रभ नृप श्रेयांस तभी, आहार दान दे हर्षाये।।
रत्नों की वर्षा हुई गगन से, सुरगण मिल जयकार किया।
धन-धन्य हुई वैसाख सुदी, अक्षय तृतिया आहार हुआ।।6।।

जब आप क्षपक श्रेणी चढ़कर, घाती पर ध्यान चक्र छोड़ा।
एकादशि फाल्गुन कृष्णा थी, केवलश्री से नाता जोड़ा।।
त्रिभुवन में ज्ञान लता फैली, भविजन को छाया सुखद मिली।
फिर माघ कृष्ण चौदश के दिन, मुक्तिश्री प्रभु के गले मिली।।7।।

क्रोधादिक रिपु को जीत प्रभो, स्वात्मा से जनित सुखामृत को।
पीकर अत्यर्थतया निशदिन, भव से सु निकाला आत्मा को।।
त्रिभुवन के मस्तक पर जाकर, अब तक व अनंते कालों तक।
ठहरेंगे वे पुरुदेव! मुझे, शुभ ''ज्ञानमती'' श्री देवें झट।।8।।

महावीराष्टक स्तोत्रम

(पं. भागचन्द्रविरचित)

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः।
समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोऽन्तरहिताः।।
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।1।।

अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं।
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि।।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।2।।

नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणि-भाजालजटिलं।
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृतां।।
भवज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।3।।

यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह।
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः।।
लभंते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।4।।

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञाननिवहो।
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः।।
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुत-गतिर्।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।5।।

यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकल्लोलविमला।
वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।।
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।6।।

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम-सुभटः।
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः।।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशमपद-राज्याय स जिनः।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।7।।

महामोहातङ्क-प्रशमनपरा-कस्मिकभिषङ्।
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मङ्गलकरः।।
शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)।।8।।

अनुष्टुप् छंद –महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतं।
यः पठेच्छ्रणुयाच्चापि, स याति परमां गतिम्।।9।।

।। इति महावीराष्टकं स्तोत्रम्।।